बनाम जन

बनास जन

साहित्य-संस्कृति का संचयन

परामर्श : प्रो. काशीनाथ सिंह, वाराणसी
डॉ. ममता कालिया, दिल्ली
डॉ. दुर्गाप्रसाद अग्रवाल, जयपुर
प्रो. माधव हाड़ा, उदयपुर
श्री महादेव टोप्पो, राँची

सम्पादक : पल्लव

सहयोग : गणपत तेली, भँवरलाल मीणा

आवरण : मोहम्मद आरिश

सहयोग राशि : 150 रुपये (यह अंक)–डाक द्वारा मँगवाने पर–180 रुपये
300 रुपये (संस्थागत)–डाक द्वारा मँगवाने पर–330 रुपये
7000 रुपये–आजीवन (व्यक्तिगत)
12,000 रुपये–आजीवन (संस्थागत)

समस्त पत्र व्यवहार : पल्लव
393, डी.डी.ए., ब्लॉक सी एंड डी
कनिष्क अपार्टमेंट, शालीमार बाग, दिल्ली-110088
व्हाट्सएप : +91–8130072004 (केवल लिखित संदेश हेतु)
ई-मेल : banaasjan@gmail.com
वेबसाइट : www.notnul.com

कृपया रचनाएँ भेजने के लिए सिर्फ ई-मेल का उपयोग करें। आग्रह है कि इस संबंध में पूछताछ न करें। 'बनास जन' में सभी रचनाओं का स्वागत है।

नोट : प्रकाशित रचनाओं से संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं।
संपादन एवं सह संपादन पूर्णतः अवैतनिक।
समस्त कानूनी विवादों का न्याय क्षेत्र दिल्ली न्यायालय होगा।

स्वामी-संपादक-प्रकाशक-मुद्रक पल्लव द्वारा 393, डी.डी.ए., ब्लॉक सी एण्ड डी, कनिष्क अपार्टमेंट, शालीमार बाग, दिल्ली-110088 से प्रकाशित और सचदेवा आफसेट प्रिंटर्स, बी-39, झिलमिल इंडस्ट्रीयल एरिया, जी.टी. रोड, शाहदरा, दिल्ली-110095 से मुद्रित।

BANAAS JAN
Peer Reviewed Journal
(A Collection of Literature)

ISSN 2231–6558

अनुक्रम

शताब्दी

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में 'स्थानिकता' के 'लैंगिक-दैहिक' संदर्भ व समीक्षा — रेखा — 7

औपनिवेशिक भारत में आधुनिकता, आंदोलन और प्रतिरोध का दस्तावेज : रंगभूमि — बृजराज कुमार सिंह — 32

विरासत

अब तो पार उतरना है — माधव हाड़ा — 50
मुक्ताबाई के अभंगों का भाव रूपांतर

देश और उपन्यास

देश प्रेम बनाम नार्सीसिस्ट अल्फा मर्द की लम्पट राष्ट्र-भक्ति — रेणु व्यास — 62

साहित्यिकी

'महाभारत' को एक समावेशी 'संस्कृति काव्य' की तरह पढ़ते हुए — विनोद शाही — 80

पालि की प्रेम-गाथाएँ — उज्ज्वल कुमार — 98

कबीर, कबीरीयत और समाज के हिन्दू-मुस्लिम दायरे — तृप्ति श्रीवास्तव — 104

'मै थांनै बोल-बोल हारी' — देवीलाल गोदारा — 115
कृष्णभक्ति का अनसुना स्वर : संत रानाबाई

कविताएँ

गौरव भारती — 124

ज्योति चावला — 127

विवेक मिश्र — 130

जितेन्द्र श्रीवास्तव — 134

आलोक श्रीवास्तव — 137

अनीता वर्मा — 139

कहानियाँ

पीर न जाने कोय	गोविन्द निषाद	142
बस इतनी सी दास्तान - अम्मी, खाला और मीठा नीम	माधुरी उपाध्याय	155
रंगोली	प्रियदर्शन	161

लम्बी कविता

सभ्यता का आख्यान उर्फ दास्तान-ए-कौन बनेगा करोड़पति	प्रभात मिलिंद	170

कथेतर

चायल	प्रतिभा कटियार	174
सागर, चाँदनी और मेघ *(मरोबरा सागर तट, सिडनी, ऑस्ट्रेलिया)*	मीना झा	184
अबकी बार : हिमालय पार : 'लेह-लद्दाख'	राकेश तिवारी	187

कथेतर चर्चा

एक महाप्रयोग की महत्ता	जय प्रकाश	193
संस्मरण के वैमर्शिक गुणों पर एक नातिदीर्घ टिप्पणी	यवनिका तिवारी	204
आईना समाज एवं समय का	जीवन सिंह	207

दलित प्रश्न

दलित सौंदर्यशास्त्र : साहित्य की वैज्ञानिक कसौटी	नामदेव	211

कुछ और

अरी भली छूटी में! *(राज, समाज और स्त्री)*	मृणाल पाण्डे	215
राष्ट्र-विचार, भाषा-विचार, स्वराज-विचार	राजीव रंजन गिरि	223

समीक्षा

लिपि से लोकवृत्त तक : हिंदी के दो शोधग्रंथों में भाषा की यात्रा	दीक्षा त्रिपाठी	239
यात्राओं का जीवित संसार	मनीषा कुमारी	245
युवा कथाकारों की जादुई दुनिया	अतुल कुमार शुक्ला	249
कहानी का युवा परिदृश्य	असीम अग्रवाल	260
समय के सवालों से रूबरू कराती किताबें	अनुपम कुमार	268

रामदरश मिश्र, राजी सेठ, विनोद कुमार शुक्ल,
राम जैसवाल, नारायण सिंह, अरुण पांडे,
गोबिन्द प्रसाद, अवधेश प्रीत
की स्मृति में यह अंक

रेखा
अनुवाद : श्वेतांशु शेखर

कृष्णा सोबती के उपन्यासों में 'स्थानिकता' के 'लैंगिक-दैहिक' संदर्भ व समीक्षा

भारत में स्त्री लेखन का आलोचनात्मक अध्ययन मुख्यतः 'स्त्री-स्थिति' व 'स्त्री-छवि' के आलोक में ही अधिक हुआ है। 'स्त्री की स्थिति' पर केंद्रित आलोचना में स्त्री-संदर्भ को इतिहास निरपेक्ष एक ऐसी अवस्था माना लिया गया है जहाँ स्त्री खुद निर्णय नहीं लेती, बल्कि जीवन जगत की घटनाओं को एक निश्चित उद्देश्य और विचारधारा पूर्ति के लिए चुपचाप सहती है। वहीं 'स्त्री की छवि' दृष्टिकोण में इस बात पर जोर दिया गया कि महिला पात्रों को साहित्य में 'कैसे और क्यों' लिखा-दिखाया जाना चाहिए या दिखाया गया है। दोनों ही स्थितियों में स्त्री को एक तयशुदा ढाँचे में घड़ दिया जाता है मानो सभी स्त्रियों के अनुभव, सोच और भावनाएँ व गति एक जैसे ही हों। यह साहित्य-आलोचना सोच महिलाओं की विविध पहचान और उनके अलग-अलग सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभवों की अनदेखी कर देती है। एक तीसरा दृष्टिकोण भी है जो स्त्री साहित्य को 'स्त्री अस्मिता खोज' का पर्यायवाची तो मानता है, पर इस अस्मिता अन्वेषण को ज्यादातर पुरुष-केंद्रित सौंदर्य व साहित्य बोध की सीमाओं में ही आँकता नजर आता है।

स्त्री लेखन कोई एकांगी लेखनीय सोच या प्रक्रिया नहीं होती। जब भी कोई स्त्री लिखती है, तो वह केवल अपनी बात ही नहीं कहती, बल्कि उन सब नजरियों और परिवेशों से भी संवाद करती है जो उसके जीवन और जीवन बौद्ध को संचालित और नियंत्रित करते हैं। स्त्री लेखन सिर्फ एक विचार या विमर्श ही नहीं है, बल्कि यह जीवन की सघन बनावट को स्त्री व मानवीय नजरिए से पुनः देखने का एक सशक्त तरीका भी है। कृष्णा सोबती का साहित्य लेखन इन सब नजरियों से इतर एक सघन स्त्री केंद्रित सोच और नजर को रेखांकित करता है।

कृष्णा सोबती का कथा संसार एक जीवंत स्त्री का जीवन संधान है। वह स्त्री को न सिर्फ पितृ-समय और संदर्भों में, बल्कि स्त्री सुलभ सांस्कृतिक, स्थानिक, दैहिक व लैंगिक परिवेश में देखती, सहेजती और परखती हैं। अपने सभी साहित्यिक-सामाजिक अनुग्रहों को वे वक्रपटुता (रेटरिक) में न बदल उन्हें स्त्री के नित घटते-बनते आंतरिक व बाह्य घटना-कर्म के रूप में चित्रित करती हैं। पितृ-सत्ता संचालित समाज के भीतर स्त्री के 'होने और बनने' की यह प्रक्रिया जटिल और विरोधाभासी होती है। यह सतत प्रक्रिया उसके स्वाभाविक स्त्रीत्व का अनिवार्य और 'ऑर्गेनिक' हिस्सा हैं। यह होने-बनने का दबाव आसान नहीं होता। कृष्णा सोबती इस दबाव को खूब समझती हैं और इसी के विभिन्न स्त्री पक्षों को, विभिन्न संदर्भों में पिरो अपने साहित्य-संसार में उकेरती हैं। स्त्री समय व परिवेश, देह व लैंगिक संस्कार उनके कथा-विमर्श के अनिवार्य अवयव हैं। इन अवयवों की बुनतर से उलझ-गुजर उनके स्त्री पात्र एक समुचित स्त्री आख्यान को रचती हुई खुद को प्रमाणित करती हैं।

रेखा जी मुरथल स्थित दीनबंधु छोटूराम विज्ञान व तकनीकी विश्वविद्यालय में अंग्रेजी की आचार्य थीं। कृष्णा सोबती उनकी प्रिय लेखिका थीं और बनास जन के आग्रह पर उन्होंने यह आलेख पिछली गर्मियों में भिजवाया था। दुखद है कि इसके बाद कैंसर से जूझते हुए उन्होंने अलविदा कह दिया। विनम्र श्रद्धांजलि।

मूलतः अंग्रेजी में लिखे इस आलेख का अनुवाद डॉ. श्वेतांशु शेखर ने किया है जो इन दिनों अमेठी के राजीव गांधी राष्ट्रीय विमानन विश्वविद्यालय में कार्यरत हैं।

सोबती के साहित्य संसार में स्त्रीत्व एक समय, स्थान और संदर्भ गर्भित मूल्य और मूल्यांकन है। उनके यहाँ स्त्रीत्व न तो जन्म से तय कोई स्थायी पहचान है और न ही यह पूरी तरह समाज द्वारा थोपे गए नियमों का नतीजा है। स्त्री एक जीवंत, सोचने-समझने वाली सत्ता के रूप में हर दिन अपने स्त्रीत्व के साथ नए-नए तरीके से जुड़ती है। वह समाज द्वारा तय की गई अपनी जगह को कभी स्वीकार करती है, कभी उसका विरोध करती है, और कभी उस पर अपनी ही तरह से प्रतिक्रिया देती है। यह सब वह अपने रोजमर्रा के व्यवहार, बोलचाल, देह-दबावों और संबंध-संदर्भों के जरिए व्यक्त करती है। इस तरह के व्यवहार से वह न केवल जेंडर निर्मित द्वैत को मिटाती है, बल्कि जेंडर अवधारणा को विविध और जटिल आयाम दे उसे एक जीवंत और परिवर्तनशील सोच-व्यवहार में परिवर्तित कर देती है। यही सोच-व्यवहार व वैयक्तिक सच्चाई कृष्णा सोबती के लेखन में स्त्री पुनर्पहचान की अवधारणा और विचार-विन्यास (discourse) को अपने भीतर समेटे हुए है। वह अपने उपन्यासों और कहानियों में जिस तरह से पात्रों, स्थितियों, विचारों और संस्कारों को प्रस्तुत करती हैं, वह सिर्फ कथा कहने भर का कार्य नहीं है--वह एक विचारशील और सक्रिय साहित्यिक हस्तक्षेप भी है। उनका लेखन अनुभवों और विचारधाराओं को केवल अभिव्यक्त नहीं करता, बल्कि उन्हें 'ज्ञान' और जीवन को समझने के नैतिक और सामाजिक मानदंडों के रूप में रूपांतरित कर देता है। इस प्रकार से उनका साहित्य न सिर्फ सोचने के लिए प्रेरित करता है, बल्कि समाज और जीवन की संरचनाओं पर सवाल भी खड़े करता है। यह साहित्यिक सक्रियता सोबती को जहाँ कल्पना, यथार्थ और विचारधारा की पारंपरिक सीमाओं को तोड़ने में मदद करती है वहीं साहित्य को केवल एक कलात्मक माध्यम न मानकर, उसे सामाजिक और वैचारिक इतिहास का जरिया बना देती है।

II

कृष्णा सोबती के लेखन में उपस्थित औरतों के जीवन की सच्चाई को समझने के लिए यह जरूरी है कि हम उनके चारों ओर मौजूद 'स्थानिक-संरचनाओं' (spatial configurations) और उसकी विमर्शीय सीमाओं (discursive limitations) को भी समझें। ये जगहें सिर्फ भौतिक नहीं होतीं, बल्कि उनका गहरा संबंध सांस्कृतिक सोच और संस्कारों से होता है। यह स्थानिक संस्कार औरतों की सोच, अनुभव और पहचान को प्रभावित और संचालित करती है। सोबती की कहानियाँ इस सत्य को बहुत महीनता से रेखांकित करती हैं। उनकी कहानियाँ और उपन्यास यह दिखाते हैं कि एक महिला का अपने स्थानिक व दैहिक-संदर्भों से कैसा रिश्ता है, वह कैसे इन 'जगह-संदर्भों' से जुड़ती हैं या इनका अतिक्रमण करती हैं। उनका लेखन यह बताता है कि महिला होने का अनुभव किस तरह 'स्थान,' 'देह', 'लिंग' और यौनिक-अनुभूतियों के बीच एक निरंतर संवाद का प्रतिफल होता है। यही संवाद यह भी तय करता है कि एक महिला अपने घर, समाज और शरीर के भीतर कैसा अनुभव करती है और इन अनुभवों से उसकी पहचान कैसे बनती-बिगड़ती है।

कृष्णा सोबती अपने साहित्य में स्त्री अनुभवों की पड़ताल मुख्यतः लिंग आधारित भौतिक और सामाजिक स्थानों के विभाजन के माध्यम व उनसे जुड़ी धारणाओं के आलोचनात्मक चित्रण से भी करती हैं। उनके लेखन में यह स्पष्ट होता है कि स्त्री जीवन को निर्धारित करने वाली 'स्थानिक-सीमाएँ'(spatial enclosuresaa) केवल भौतिक ही नहीं होती, बल्कि वे गहराई से पितृसत्तात्मक संरचना के अन्य आयामों से जुड़ी होती हैं। और यह सांस्कृतिक-भौगोलिक सत्ता 'भीतर' (घरेलू क्षेत्र), 'बाहर' (सार्वजनिक क्षेत्र) और 'दहलीज' (भीतर-बाहर की सीमा रेखा) के नियम से व्यवस्थित और संचालित होते हैं। यह नियम स्त्री के लिए समाज द्वारा खींची गई उस विभाजक रेखा को रेखांकित करता है, जो 'भीतर' (घरेलू क्षेत्र) और 'बाहर' (सार्वजनिक क्षेत्र) के बीच सख्त अंतर स्थापित करती है। कृष्णा सोबती के लेखन में